सर्टिफिकेट पिम प्रशिक्षण पाठ्यक्रम

मॉड्यूल 1- सहभागी सिंचाई प्रबंधन की आवश्यकता

विषय 1.4 सहभागी सिंचाई प्रबंधन के सफल उदाहरण

विषय-1.4

सहभागी सिंचाई प्रबंधन के सफल उदाहरण

मॉड्यूल-1 के विषय

1.1 देश में कृषि तथा सिंचाई की स्थिति

1.2 पारंपरिक नहर सिंचाई प्रबंधन की समस्याएँ

1.3 सहभागी सिंचाई प्रबंधन की अवधारणा तथा आवश्यकता

1.4 सहभागी सिंचाई प्रबंधन के सफल उदाहरण

क्या सहभागी सिंचाई प्रबंधन संभव है ..?

हमारे देश में सहभागिता कोई नई बात नहीं है। खेती-किसानी और रोजमर्रा के कामों में किसान हमेशा से सहभाग और एक-दूसरे की मदद करते आये हैं। खेती-किसानी का काम तो ऐसा है कि बिना सहभाग के हो ही नहीं सकता। बात चाहे फसल की रोपाई और कटाई की हो या छान छाने की हो, गांवों में आज भी कई काम जैसे शादी-विवाह इत्यादि में लोग एक-दूसरे के काम में हाथ बंटाते हैं और इसके फायदे सब जानते है।

नीचे प्राचीन तथा वर्तमान काल के सफल सहभागी प्रबंधन के कुछ उदाहरण प्रस्तुत किए गए हैं:

1. प्राचीन काल में सहभागी सिंचाई प्रबंधन के सफल उदाहरण

भारत में कृषकों द्वारा सिंचाई में सहभागिता की स्थिति प्राचीन समय से रही है। आगे के भाग में पारम्परिक सिंचाई प्रबंधन के कुछ उदाहरण दिये गये हैं-

- दक्षिण भारत के विजयनगर साम्राज्य के राजा कृष्ण देव राय ने तुंगभद्रा नदी पर कई सिंचाई प्रणालियां विकसित करवायीं और उन्हें स्थानीय समितियों (मुख्य रुप से मन्दिरों को जो उस समय के मजबूत स्थानीय निकाय थे) को सौंप दिया। राज्य को उपज का छठवां हिस्सा कर के रुप में प्राप्त होता था, लेकिन इन प्रणालियों का प्रबंधन पूरी तरह स्थानीय निकायों के हाथ में था। पानी का बंटवारा करने के लिए "नीरघंटी" नियुक्त किये गये थे, जो स्थानीय पंचायतों के अधीन थे और पंचायत अपनी सेवाओं के बदले किसानों से उनकी उपज का एक छोटा हिस्सा कर के रुप में लेती थी। इस प्रबंधन में पानी एक खेत से दूसरे खेत में जाता था और किसान अपनी जरुरत के मुताबिक ही उसे लेते थे। हर साल अनुश्रवण और मरम्मत के लिए एक तिहाई प्रणालियाँ कुछ समय के लिए बंद कर दी जाती थीं और इसमें प्रजा श्रमदान करती थी। अगर मरम्मत कार्य के लिए धन की आवश्यकता होती थी तो पंचायत किसानों से सेवाकर की वसूली करती थी। नहर के खुलने और बंद होने की अग्रिम सूचना किसानों को दी जाती थी। सबसे बड़ी खूबी यह थी कि इसका प्रबंधन स्थानीय लोग करते थे और शासन का इसमें कोई हस्तक्षेप नहीं रहता था।
- दक्षिण भारत के ही चोल साम्राज्य में भी सिंचाई से जुड़े उल्लेखनीय काम हुए। दूसरी शताब्दी में सम्राट कार्तिकेय ने कावेरी नदी पर बड़ा बांध बनवाया। इससे सिंचाई जल की उपलब्धता पूरे साम्राज्य के किसानों को हो गयी। चोल सम्राटों ने सिंचाई हेतु जल संग्रह करने के लिए टैंक भी बनवाये और सिंचाई प्रबंधन की जिम्मेदारी स्थानीय निकायों (मुख्यतः मन्दिरों को) को सौंप दी। सिंचाई प्रबंधन ग्राम सभा द्वारा होता था। ग्राम

सभा के अधीन सिंचाई प्रबंधन समिति होती थी। इन समितियों के ऊपर नगर स्तर पर "नादुस" होता था। ये समितियां शासन के हस्तक्षेपों से मुक्त थीं तथा सिंचाई प्रणालियों के निर्माण, सफाई व मरम्मत, सदस्यों के अंश की बिक्री, अन्य समितियों से पानी की खरीद, मत्स्य पालन व बिक्री इत्यादि का अधिकार रखती थीं। इनके द्वारा अपनाये गये जल प्रबंधन की कुछ मुख्य विशेषताएं निम्न थीं-

- किसानों को उनकी कृषि योग्य भूमि के अनुपात में पानी मिलता था।
- कुछ निश्चित मामलों में कुछ निश्चित व्यक्तियों द्वारा पानी का उपयोग प्रतिबंधित भी किया जाता था।
- सिंचाई के लिए स्थानीय नियम बनाये गये थे।
- सिंचाई जल की बचत के लिए भी नियम थे।
- जल का मापन घंटों के हिसाब से, चक्र के हिसाब से और बारी के हिसाब से होता था।

इन समितियों द्वारा संबंधित विवादों का निपटारा भी किया जाता था। विवाद अक्सर स्थानीय स्तर पर ही निपटा लिये जाते थे, बस कुछ विशेष परिस्थिति में ही शासन का हस्तक्षेप होता था। ग्राम सभा निर्माण एवं मरम्मत के लिए धन की व्यवस्था किसानों से प्राप्त कर से करती थी। आवश्यकता पड़ने पर शासन से भी धन मिल जाता था। शिलालेखों से प्राप्त जानकारी के अनुसार धन की कमी या आपसी झगड़े से नुकसान की स्थिति में समिति के सदस्य व्यक्तिगत रुप से जिम्मेदार माने जाते थे।

इस पूरी प्रक्रिया में शासन की भूमिका सहयोगी की रहती थी। स्थानीय निकायों पर सिंचाई प्रबन्धन की जिम्मेदारी रहती थी। सम्राट सिंचाई प्रणाली बनवाते थे और उसे जनता को सौंप देते थे। अगर कोई अन्य इन प्रणालियों को बनवाता था, तो राज्य उसे जमीन उपलब्ध कराता था। प्रणाली की मरम्मत की व्यवस्था भी शासन करता था। स्पष्ट आदेश थे कि राज्य की आमदनी का एक निश्चित हिस्सा मरम्मत के लिए सुरक्षित रखा जाये।

अंग्रेजों के आने से पूर्व मराठों के शासन में भी सिंचाई प्रणाली का कुछ हिस्से की देख- रेख शासन द्वारा की जाती थी और कुछ हिस्सा जनसमुदाय द्वारा देखा

जाता था। अब भी उस क्षेत्र में शासन द्वारा देखे जाने वाले हिस्से को “सरकार” कहते है, जबकि सिंचाई प्रणालियों के जिस हिस्से की देख- रेख की जिम्मेदारी किसानों की होती थी उसे “खुदीमरम्मत” कहते हैं।

- उत्तर प्रदेश के बलरामपुर जिले में कई जलाशय जमींदारी जलाशय के नाम से आज भी जाने जाते है। इन्हें पुराने जमीदारों ने बनवाया था और उसे जनता को संचालन व रखरखाव हेतु सौंप दिया था।
- उत्तराखण्ड व हिमांचल प्रदेश में आज भी निजी गूलें मिल जायेंगी, जिन्हें किसान आपसी सहभागिता से चला रहे हैं।

2. सहभागी सिंचाई प्रबंधन के वर्तमान सफल उदाहरण

<u>आइये जानते है दो समितियो मी सफल गाथा-</u>

- उत्तर गुजरात के मेहसाणा जिले में स्थित धरोई सिंचाई योजना के तहत आने वाला एक गांव छाबलिया है। गांव की आबादी करीब 6500 की है तथा यहां का मुख्य व्यवसाय खेती और पशुपालन है। अधिकांश जमीन नहर के सिंचाई क्षेत्र में आती है, लेकिन नहर पुरी तरह नदारत थी। डी एस सी द्वारा प्रायोजित किसान प्रतिनिधियों के दल (फार्मर्स स्फियर हेट टीम) ने छाबलिया गाव का दौरा किया। दल ने कुछ चुनिंदा ग्रामवासीयो को पडोस की एक सफल समिती का भ्रमण करवाया और किसानों को सिंचाई समिति बनाने के लिए प्रोत्साहित किया। किसान समिति के सदस्य बने और इस तरह समिति की शुरुआत हुई। नहर की तकनीकी खामियों का अध्ययन किया गया और शासकीय अभियंता द्वारा 5 लाख 18 हजार रुपए बजट तैयार किया गया । किसानों ने 10% आर्थिक योगदान किया और शेष राशि शासन के सहयोग से प्राप्त हुई । विभाग की देखरेख मे मरम्मत का काम समिति द्वारा किया गया। समिति ने सरकार के साथ अनुबंध कर नहर के प्रबंधन को संभाल लिया। अगले ही वर्ष रबी में नहर में पानी छोडने से पूर्व किसानों ने श्रमदान करके समूची नहर की सफाई

की । सिंचाई मे होने वाले व्यय और आय का अनुमान लगा कर समिति ने बजट बनाया और उसके मुताबिक प्रति हेक्टेयर सिंचाई शुल्क तय किया। पानी के वितरण संबंधी नियम बनाए । स्थानीय युवको को संचालकों (ऑपरेटरों) के तौर पर रखा गया । वाराबंदी पद्धति अपना कर पानी के वितरण की व्यवस्था बनाई । इस तरह गांव के इतिहास मे पहली मर्तबा 135 हेक्टेयर क्षेत्र में सिंचाई हुई। जो पूर्व मे मात्र 30 हेक्टेयर क्षेत्र में ही होती थी। इस तरह 105 हेक्टेयर क्षेत्र में सिंचाई में बढ़ोतरी हुई। खेती का खर्च निकाल कर प्रति हेक्टेयर 10 हजार की शुद्ध आय, माने तो एक ही वर्ष में किसानों ने खेती से 10 लाख 50 हजार की आय प्राप्त की। इसके अलावा पशुओं के लिए पर्याप्त चारा मिलने के कारण उनके औसत दूध उत्पादन में करीब एक लीटर की वृद्धि हुई।

इसी तरह छाबलिया से लगभग 50 किलोमीटर स्थित गांव खतोडा के लोगो ने भी समस्या से समधान की ओर कदम बढाये । तहसील मुख्यालय वड़नगर से 5 किलोमीटर दूर स्थित करीब 2300 की आबादी वाले गांव मे नहर की तकनीकी खामियों के कारण 280 हेक्टेयर क्षेत्र सिंचाई से वंचित थे । सिंचाई नही होने से होने वाले नुकसान की जब गणना की गयी तो किसानों ने अनुमान लगाया कि एक हेक्टेयर पर वार्षिक औसतन 18 हजार रुपए का उत्पादन माने तो 280 हेक्टेयर क्षेत्र में 50 लाख 40 हजार रुपए का उत्पादन होता । यदि कुल आय का आधा कृषि में खर्च होता तो शुद्ध आय 25 लाख 20 हजार रुपए होती । इस प्रकार सिंचाई नहीं होने के कारण प्रति वर्ष इस आय का नुकसान उठाना पड़ा । किसान यह नुकसान पिछले 12 वर्षो से उठा रहे हैं । इस प्रकार गत 12 वर्ष में नुकसान का यह आंकड़ा कुल 3 करोड़ रुपए का आंका गया। इसके समकक्ष नहर मरम्मत का बजट बनाने पर पता चला कि इस कार्य में मात्र 11 लाख रुपए का खर्च होगा, किसान स्तब्ध थे। ऐसा नुकसान अब और ज्यादा नहीं उठाना है, इस निश्चय के साथ किसानों ने नहर के सुधार कार्य के बजट का 20 प्रतिशत के हिसाब से 2 लाख 20 हजार रुपए का सहयोग राशि जमा की। नहर सुधार के पहले ही साल में

सिंचाई क्षेत्र में 82 हेक्टेयर की वृद्धि हुई इसके अलावा पशुपालन के लिए पर्याप्त घासचारा उपलब्ध होने के कारण दूध उत्पादन में अच्छी वृद्धि हुई।

इन समितियो की सफल गाथाओ से ये बात स्पष्ट होती है की अगर किसान और किसानो को प्रेरित करने वाले विभाग और संस्थाएं सहभागी सिंचाई प्रबंधन कार्यक्रम की मूल भावना “समस्या से समाधान” और “छोटे खर्च से बडा लाभ” को केंद्र मे रखकर जल उपभोक्ता संस्थाओ का गठन करे तो सफलता निश्चित है । किसानो की बढी हुई सहभागिता और उत्साह को कायम रखने की दिशा मे शासन का अर्थिक और नितिगत सहयोग सोने मे सुहागे का काम करता है । कई बार बरसात कम होने की दशा मे बांध मे सूखे का सामना करती है ये समितियां, पर अगले साल फिर से उठ खडी होती है, अर्थिक सक्षम होने से ।